International Online Multidisciplinary Journal
Review of Research
Save Tree, Save Paper, Save World
ISSN No : 2249-894X
Impact Factor 2.1002 (UIF) [Yr.2013]
3.1402 (UIF) [Yr.2014]
ISSN 2249-894X Impact Factor : 3.1402 (UIF) Volume - 5 | Issue - 4 | Jan - 2016

महाकाव्यकाल में नारी

सुनिता मीना
व्याख्याता (इतिहास) , राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सवाई माधोपुर
राजस्थान

सारांश

''महाकाव्यों में जहां स्त्री को एक ओर महिमा मंडित किया गया है वहीं दूसरी ओर उस पर अनैतिक लांछनो की झड़ी भी लगाई गई है। इस काल में नारी की स्थिति में गिरावट के पश्चात् भी उसे समाज में सम्मानीय स्थान प्राप्त था। समाज में बाल विवाह, पर्दाप्रथा, सती प्रथा, व दहेज प्रथा जैसी कुरीतियों का प्रचनल नहीं था। महिलाओं को धार्मिक कार्य करने, शिक्षा प्राप्त करने तथा सम्पत्ति सम्बन्धित अधिकार प्राप्त थे। कौशल्या, सीता, गांधारी, कुंती, द्रोपदी, सुभद्रा,सत्यभामा जैसी नारियों के चरित्र में जो ओजस्विता और कर्मनिष्ठा का सम्मिश्रण हमें दिखाई देता है वह महाकाव्यकाल में नारी का स्थान निरूपित करने में हमारा मुख्य आधार बन गया है। रामायण और महाभारत दोनों ही ग्रन्थ मध्यम और निम्नवर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाली गृहणी, कृषक, सेविकाओं तथा श्रमिक महिलाओं के विषय में मौन है।''

संकेताक्षर – महाकाव्यकाल, जातकर्म, मंत्रविद्, परिचर्या, पितृसत्तात्मक.

प्रस्तावना :

स्त्री समाज की धुरी है माता और भार्या के रूप में वह जिन उत्तरदायित्वों का संवहन करती है उन्हीं पर समाज का उत्कर्षापकर्ष अवलम्बित है। परिवार के लिये नारी की खुशहाली आवश्यक है रामायण और महाभारत में महिलाओं की स्थिति का जो वर्णन मिलता है वह परस्पर विरोधाभासपूर्ण स्थिति को दर्शाता है। एक ओर तो इनमें नारी को देवी की संज्ञा दी गई है वहीं दूसरी ओर उसे नरक का द्वार भी माना गया है। कुछ बातों में स्त्रियां भारी असमर्थताओं एवं अयोग्यताओं के वशीभूत मानी जाती थी, तो कुछ विषयों में वे पुरूषों की अपेक्षा अधिक अधिकार एवं स्वत्व रखती थीं। कहीं उसे पुरूष का अर्द्धभाग और श्रेष्ठतम सखा कहा गया है।[1] तो कही कहा गया है कि सैंकड़ो हजारो में कहीं एक स्त्री पतिव्रता होती है।[2] अतः इन कथनों में सामन्जस्य रखना अत्यन्त कठिन सा हो जाता है।

अन्य युगों के समान महाकाव्यकाल में भी भारतीय समाज में पुत्री की अपेक्षा पुत्र ही अधिक प्रिय माना जाता था क्योंकि वह उदक–दानादि के द्वारा अपने पितरों को पुत नामक नरक से मुक्त करता था। इसी कारण उसका नाम 'पुत्र' पड़ा।[3] वह इहलोक व परलोक दोनों के लिए आवश्यक माना जाता था। रामायण में एक

जगह यह आक्षेप किया गया है कि कन्या का जन्म पिता के लिए दुःख का विषय है।[4] महाभारत में भी पुत्री को साक्षात् 'आपत्ति' कहा गया है।[5] वह अपने माता–पिता और पति तीनों के कुलो के लिए संकट मानी गयी है।[6]

परन्तु इन उद्धरणों से यह नहीं समझना चाहिये कि समाज में पुत्री नितान्त अनादृत और अपेक्षित थी। यद्यपि समाज में पुत्री की अपेक्षा पुत्र की कामना अधिक की जाती थी तथापि पुत्रियों से भी माता–पिता का अनुराग यथेष्ट था। महाकाव्यों में अनेक उदाहरण ऐसे मिलते है जब पुत्रियां अपने माता–पिता के असीम अनुराग का केन्द्र थी। कुन्ती, देवयानी, द्रौपदी, उत्तरा और सीता के उदाहरण ऐसे ही है। सावित्री और दमयंती क्रमशः अपने पिता अश्वपति और भीम की विविध साधनाओं और क्रियाओं के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई थीं।[7] मणिपुर नरेश अपनी पुत्री को पुत्र के समान समझते थे। महाभारत में भीष्म का भी कथन है कि पुत्री, पुत्र के समान होती है।[8] यही नहीं, कुछ मनुष्य तो पुत्रियों को पुत्र से भी अधिक प्रिय और वांछनीय समझते थे।[9] इस काल में संतान हीन व्यक्ति के द्वारा कन्या गोद लेने के भी उदाहरण मिलते हैं। युद्ध श्रेष्ठ शूर ने अपनी कन्या पृथा अपने फूफेरे भाई भोज को दे दी थी, भोज ने उसका अपनी पुत्री के समान पालन–पोषण किया।[10] यह कथन सिद्ध करता है कि समाज में पुत्री माता–पिता के अनुराग की पात्र समझी जाती थी। यद्यपि पुत्री को पुत्र के समान उपनयन इत्यादि संस्कारों का अधिकार नहीं था।[11] किन्तु कुछ उदाहरण ऐसे भी मिलते है जिनसे ज्ञात होता है कि पुत्री का भी संस्कार होता था। किन्तु ये मात्र अपवाद ही कहे जा सकते हैं जैसे– महाराज शांतनु वन में पड़ी हुई कृपी को उठाकर राजमहल में लाये और शास्त्रानुसार उनका नामकरण संस्कार करवाया। महाराज अश्वपति ने भी सावित्री के लिए जातकर्म इत्यादि सभी संस्कार करवाए थे।[12] लेकिन यहाँ अल्प उदाहरणों के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि सभी कन्याओं के लिए इस तरह के संस्कर करवाए जाते थे।

प्रायः पुत्री को पुत्र के समान आश्रम में भेजकर शिक्षा नहीं दी जाती थी। विवाह के पूर्व कन्या को पितृगृह में अनेक विषयों की शिक्षा दी जाती थी। सीता ने घर पर ही अपने माता–पिता से शिक्षा पाई थी। स्त्रियां यज्ञ में भी भाग लेती थीं। राम के युवराज पद पर अभिषेक के समय कौशल्या ने यज्ञ किया था।[13] कुन्ती अथर्ववेद में पारंगत थी। इससे स्पष्ट है कि स्त्रियां मंत्रविद् एवं पंडिता हुआ करती थीं। उस युग की स्त्रियां ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए उपनयन संस्कार भी कराती थी। कुछ ऐसी भी नारिया थी जो जीवन पर्यन्त अध्ययन में लीन रहती थी और अविवाहित रह जाती थीं। ऋषि कुशध्वज की कन्या वेदवती ऐसी ही थी। ऐसी स्त्रियां बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न होती थीं। काशकृत्सना ने मीमांसा जैसे जटिल एवं गूढ़ विषय का अत्यधिक अध्ययन किया था। याज्ञवल्क्य की पत्नी मैत्रेयी विख्यात दार्शनिक थी, वहीं गार्गी में अद्भुत तर्क शक्ति थी। कुछ उदाहरण ऐसे भी मिलते हैं जिसमें पुत्रियों को भी पुत्र की भांति उच्च शिक्षा केन्द्रों में भेजा जाता था। उदाहरणार्थ अत्रेयी वेदान्त के अध्ययन के लिए वाल्मीकि के आश्रम में रहती थी। दोनों महाकाव्य स्त्री–शिक्षा के ऊपर प्रचुर प्रकाश डालते हैं। रामायण कौशल्या और तारा दोनों को ही 'मंत्र–विद्' कहती है। इसी महाकाव्य में सीता संध्या करती हुई प्रदर्शित की गई है।[14] इससे सिद्ध होता है कि वह मन्त्रविद् थी। रामायणकार अत्रेयी को वेदान्त का अध्ययन करते हुए प्रदर्शित करता है। इसी प्रकार महाभारत में द्रौपदी को पंडिता कहा गया है। कन्याएं पूजा–पाठ भी करती थीं। पिता के घर गांधारी के शिवपूजा का उल्लेख मिलता है। कुन्ती ब्राह्मण और अतिथियों की परिचर्या पर नियुक्त थी।[15]

इन समस्त उदाहरणों को देखने से प्रतीत होता है कि नियमतः विवाह वयस्क अवस्था में ही होते थे। भीष्म का स्पष्ट कथन है कि व्यस्का कन्या के साथ विवाह करना चाहिए।[16] रामायण का कथन है कि विवाह के समय दशरथ के चारों पुत्र यौवनशाली थे।[17] विवाह के समय उनका अपनी पत्नियों के साथ एकान्त रमण करने का उल्लेख है। इससे प्रकट होता है कि उनकी पत्नियां भी युवती थीं। महाभारत में कुन्ती, द्रौपदी, देवयानी, शकुन्तला, सत्यवती, दमयन्ती सभी व्यस्कावस्था में ही विवाहित हुई थीं। रामायण में ही विवाह के पश्चात् सीता के साथ राम के एकान्त रमण का उल्लेख है इससे स्पष्ट है कि विवाह के समय सीता युवती थी। रामायण में ही एक दूसरे स्थान पर सीता, अनुसूया से कहती है कि विवाह के पूर्व 'पतिसंयोगसुलभवय' को प्राप्त मुझे देखकर मेरे पिता को उतनी चिन्ता थी जितना निर्धन को अपने धन–नाश पर।[18] इससे स्पष्ट हो जाता है कि महाकाव्य कालीन समाज में बाल–विवाह का प्रचलन नहीं था। शकुन्तला, दमयंती, सावित्री, देवयानी और सर्वनिष्ठा आदि कोई भी विवाह के समय अव्यस्क नहीं थी। सत्यवती, अम्बिका, अंबालिका, गांधारी, कुंती, माद्री, द्रौपदी, सुभद्रा, चित्रांगदा आदि महिलाओं का विवाह यौवन काल में ही हुआ था।

दोनों महाकाव्यकार समाज के लिए विवाह को अनिवार्य बताते हैं रामायण के अनुसार पतिविहीन स्त्री का जीवन तन्त्रीविहीन वीणा तथा चक्रविहीन रथ के समान निरर्थक है।[19] महाभारत के अनुसार गृहणी ही गृह

है।[20] महाभारत अपनी कन्या का उचित वर के साथ विवाह न करने वाले मनुष्य को बह्माघाती की संज्ञा देता है।[21] सामान्यतः विवाह माता–पिता द्वारा तय किए जाते थे। सम्पूर्ण महाकाव्य विचारधारा ब्रह्म विवाह को सम्मानित करती है। रामायण का कथन है कि कन्या का विवाह कराना पिता का उत्तरदायित्व है।[22]सीता की तीनों बहनों का विवाह भी उनके पिता जनक ने अपनी इच्छाा से किया था। महाभारत के उदाहरण भी इसकी पुष्टि करते हैं। देवयानी के पिता की अनुमति के बिना तथापि ने उसके साथ विवाह करना अस्वीकार कर दिया था।[23] राजा संवतरण तपती नाम कन्या के साथ विवाह करना चाहते थे, परन्तु उस कन्या ने यह कहकर राजा के प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया कि ''मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ अतः आप मेरे पिता से मेरे विवाह का प्रस्ताव कीजिए। मेरे पिता मेरे संरक्षक हैं।[24] इस प्रकार महाकाव्यों ने स्त्री की विवाह हेतु स्वतन्त्रता का प्रायः मौन विरोध किया है उसके विवाह में पिता तथा भाई की स्वीकृत महत्वपूर्ण थी। किन्तु इसके साथ ही राजकन्याओं को स्वयंवर के माध्यम से अपना पति चुनने की स्वतंत्रता थी। लेकिन साथ ही हम देखते हैं कि कई जगह ये स्वंयवर कन्या को वस्तु के रूप में प्रस्तुत करते हैं जिसे कोई भी व्यक्ति शौर्य प्रदर्शन करके जीत सकता था। सीता स्वंयवर व द्रौपदी स्वंयवर इसी के उदाहरण प्रतीत होते हैं। प्राय स्त्रियां प्रेम विवाह भी करती थीं जो उनकी स्वतंत्रता का प्रतीक है इसके उदाहरण हमें गधर्व विवाह के प्रचलन में दृष्टिगत होते हैं। किन्तु इस प्रकार के विवाह जो स्त्री को स्वतंत्रता प्रदान करते हैं, व्यवस्थाकारों ने इन्हें हतोत्साहित करने का प्रयास किया है।

उच्च वर्ग में बहुविवाह का प्रचलन था। दशरथ, पाण्डु, अर्जुन, भीम आदि बहुपत्नीक थे। इस प्रथा को धर्म्य घोषित करते हुए महाभारतकार ने कहा है कि बहुविवाह अपराध नहीं है।[25] एक पुरूष द्वारा बहुत सी स्त्रियों से विवाह किया जा सकता था लेकिन एक महिला के एक से अधिक पति नहीं हो सकते थे केवल द्रौपदी का उदाहरण अपवाद है। इस सबके उपरांत भी एकपत्नीकता को दाम्पत्य जीवन का आदर्श स्वरूप समझा जाता था। विवाह स्त्री एवं पुरूष का एक विशेष संस्कार तथा पवित्र बंधन माना जाने लगा। विवाह का प्रमुख उद्देश्य पितृऋण के परिशोध हेतु पुत्र प्राप्ति था।

धर्म–पत्नि का स्थान समाज में श्रेष्ठ था। उसे स्नेह, प्रेम और भक्ति का प्रतीक माना जाता था। स्त्री के पालन पोषण का दायित्व पति का था। महाकाव्यों में पत्नी सदा आदर की पात्र मानी गयी है। महाकाव्यकार पत्नी के विभिन्न कर्तव्यों का उल्लेख करते हैं स्त्री को अपने नपुंसक, कोषवृद्धि–ग्रस्त, पतित, अपंग, रोगी पति को भी नहीं छोड़ना चाहिए क्योंकि पति ही पत्नि का देवता हैं।[26] महाभारत में द्रौपदी कहती है कि ''मेरा पति जो नहीं खाता, पीता या पाता, मैं भी उसे नहीं खाती, पीती या पाती।[27] अनुशासनपर्व के अनुसार विदेश गये हुए पुरूष की पत्नी को अंजन, रोचन, नैयमिक स्नान, पुष्पअनुलेपन एवं आभूषण छोड़ देने चाहिए।महाकाव्यों में पतिव्रता स्त्रियों के विषय में अतिरंजित कथाएं भरी पड़ी हैं। अरून्धती, अनसूया, सावित्री, शाण्डिल्या, सत्या, मैना को महान पतिव्रता कहा गया है। माता के रूप में स्त्री अत्यधिक सम्माननीय थी। माता महत्ता में दस पिताओं से, यहां तक की सम्पूर्ण पृथ्वी से बढ़कर सम्माननीय मानी गयी है। आदिपर्व में उल्लेखित है कि सभी प्रकार के श्रापों से मुक्ति मिल सकती है किन्तु माता के श्राप से नहीं।[29]

महाभारत एवं रामायण में विधवा स्त्रियों के पुनर्विवाह का विधान तो स्पष्टतः नहीं मिलता लेकिन ऐसी स्थिति में वे देवर को पति के रूप में ग्रहण कर सकती थीं। बालि की मृत्यु पर उसकी विधवा पत्नी तारा ने सुग्रीव के साथ विवाह किया। रामायण में भी एक स्थान पर सीता ने लक्ष्मण पर अपना क्रोध प्रकट करते हुए यह कहा था कि तुम राम की रक्षा के लिए इसलिए नहीं जाना चाहते कि जिससे उनकी मृत्यु के पश्चात् तुम मुझे अपनी स्त्री बना सको।[30] यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि समाज का एक वर्ग विधवा–विवाह अथवा नारी के पुनर्विवाह को निन्दनीय समझता था। महाभारत में सावित्री ने नारद से कहा कि कन्या–दान केवल एक बार ही होता है। इसी प्रकार दीर्घतमा ने पुनर्विवाह का घोर विरोध करते हुए कहा था कि नारी का एक ही पति होता है। इन सब तथ्यों से स्पष्ट हो जाता है कि प्राय समाज में विधवा विवाह का प्रचलन नहीं था। महाकाव्यों में यत्र–तत्र बिखरे विधवा स्त्रियों से सम्बन्धित कथनों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि समाज में विधवाओं पर अनेक प्रकार के नियम–कानून व प्रतिबंध लागू किए गए थे। आदिपर्व में आया है कि जिस प्रकार पृथ्वी पर पड़े हुए मांस के टुकड़े पर पक्षीगण टूट पड़ते हैं, उसी प्रकार पतिहीन स्त्री पर पुरूष टूट पड़ते हैं।[31] आदिपर्व में उल्लेखित है कि बहुत से पुत्रों के रहते हुए भी सभी विधवाएं दुःख में है।[32]

यदि कोई स्त्री पुत्रोत्पादन के निमित पति के आदेश मिलने पर भी दूसरे पुरूष के साथ संयोग न करके आदेश का उल्लंघन करती है तो वह पाप की भागिनी होती है।[33] आदिपर्व में उल्लेखित इस कथन से स्पष्ट है कि समाज में नियोग प्रथा प्रचलन में थी। महाभारत में कुंती और माद्री द्वारा नियोग से क्रमश 3 और 2 पुत्र

प्राप्त किये थे। महाकाव्य में वर्णित नियोग के द्वारा राजा व्युषिताश्व ने 7 पुत्रों और राजा बलि ने 17 पुत्र प्राप्त किये थे।यदि महाकाव्यों में वर्णित नियोग प्रथा का विश्लेषण करें तो प्रतीत होता है कि इस प्रथा में संतान प्राप्ति हेतु नहीं वरन् केवल पुत्रोत्पादन हेतु नारी को एक माध्यम के रूप में प्रयोग किया जाता था। महाभारत में अम्बिका व अंबालिका के उदाहरणों से ज्ञात होता है कि कई बार नियोग प्रथा महिलाओं पर शक्तिबल के आधार पर आरोपित की जाती थी।[34]

महाकाव्यों में सती–प्रथा के कतिपय उदाहरण मिलते हैं। रामायण में वेदवती की माता प्रज्वलित अग्नि में प्रविष्ट हुई थी। महाभारत में अपने मृतक पति पाण्डू के साथ भाद्री और वसुदेव के साथ देवकी, भद्रा, रोहणी और मदिरा के सती होने का उल्लेख है परन्तु इन चार उदाहरणों से तत्कालीन समाज में सती–प्रथा की मान्यता सिद्ध नहीं होती। रामायण और महाभारत में ऐसे असंख्य उदाहरण मिलते हैं जिनमें बहुसंख्यक नारिया अपने पति की मृत्यु के पश्चात् भी जीवित रही थीं। इनमें कौशल्या, कैकयी, सत्यवती, कुन्ती, उत्तरा आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। सती प्रथा के प्रारम्भिक उदाहरण महाकाव्यों में मिलने शुरू होते है सती प्रथा का यह आरम्भ, पतिव्रता की अवधारणा तथा सतीत्व के महिमा मडंन के कारण हुआ। किन्तु पुरूषों के लिए समाज में कही इस तरह की अवधारणा का उल्लेख नहीं मिलता। महिलाओं के लिए ऋषि समाज तथा राज्य समाज दोनों में नैतिकता के नियम भिन्न–भिन्न थे।

महाकाव्यकालीन समाज में भी वैश्या–वृत्ति प्रचलन में थी। गर्भवती गान्धारी की सेवा–सुश्रूषा करने के लिए एक वेश्या नियुक्त की गई थी।[35] महाभारत में एक स्थान पर उल्लेख हैं कि शान्ति–वार्ता के लिए आये हुए श्रीकृष्ण का स्वागत वेश्याओं ने किया था। युद्ध में जाने वाली पाण्डवों की सेना में भी वेश्याएं सम्मिलित थी। ऐसा प्रतीत होता है कि विभिन्न कार्यों के लिए अनेक अवसरों पर ये नियोजित की जाती थीं।

महाकाव्यों में जहाँ स्त्री को एक ओर देवी कहा गया है वहीं दूसरी ओर स्त्रियों पर घोर अनैतिक लांछन लगाये गये हैं। महाभारत के अनुशासन पर्व के अनुसार ''सूत्रकार का निष्कर्ष है कि स्त्रियां अनृत (झूठी) है,'' ''स्त्रियों से बढ़कर कोई अन्य दुष्ट नहीं है, ये एक साथ ही उस्तरे की धार हैं, विष हैं, सर्प और अग्नि हैं।''[36] महाभारतकार लिखते है कि ''सैंकड़ों हजारों में कहीं एक स्त्री पतिव्रता होती है। महाकाव्यों में उल्लेख आता हैं कि स्त्रियां वास्तव में दुर्दमनीय हैं, वे अपने पति के बंधनों में इसलिए रहती हैं कि उन्हें कोई अन्य पूंछता नहीं।[37] रामायण में भी महाभारत की भांति स्त्रियों को स्थान–स्थान पर दुष्टा कहा गया है और उनकी भरपूर निंदा की गयी है 'उन्हें धर्मभ्रष्ट, चंचल, क्रूर और विरक्ति उत्पन्न करने वाली कहा गया है। श्रीमद्भगवत् गीता में एक जगह उल्लेख है कि पूर्व जन्म के पापों के कारण जीव, स्त्री रूप से जन्म ग्रहण करते हैं।[38] अर्थात् स्त्री का जन्म ही पाप का पर्याय है। उन्हें समस्त पापों का मूल समझा जाता था तथा लड़कियों के जन्म पर शोक प्रकट किया जाता था। कहीं–कहीं तो उनका घोर तिरस्कार भी होता था। उदाहरण स्वरूप दुर्योधन ने भी सभा के बीच द्रोपदी का अपमान किया किंतु किसी भी व्यक्ति ने उसका विरोध नहीं किया। सीता को पवित्र एवं पतिव्रता सिद्ध होने के लिए अग्नि परीक्षा देनी पड़ी थी।

किन्तु यह एक पक्षीय दृष्टिकोण है और इस प्रकार के उदाहरण बहुत कम मिलते हैं अब भी समाज में नारी सम्मान की दृष्टि से देखी जाती थी। पर्दा प्रथा का विकास नहीं होने के कारण वे स्वतंत्रतापूर्वक घर से बाहर जाती थी उदाहरण के लिए कैकयी का दशरथ के साथ युद्ध में जाना। अविवाहित या अकेले पुरूष को यज्ञ का अधिकार नहीं था। यज्ञ में पत्नी की उपस्थिति अनिवार्य थी और भी बहुत से धार्मिक कार्य थे जिनमें महिलाओं की भूमिका महत्वपूर्ण थी। नारी की स्थिति में कुछ गिरावट आने के बाद भी शिक्षा के क्षेत्र में उनकी अवस्था दयनीय नहीं हो पाई थी। अब भी समाज में उनका स्थान उच्च था। महाकाव्यकाल में नारी और पुरूष के मिलन से ही गृहस्थाश्रम का निर्माण माना गया है, नारी को विशिष्ट स्थान दिया गया है। उन्हें सम्पत्ति संबन्धित अधिकार प्राप्त थे महाकाव्य काल की नारियां वास्तविक अर्थों में पुरूषों की कर्म संगिनी थीं। महाभारत में तो सर्वत्र नारी का सहयोग ही दिखाई पड़ता है। गान्धारी, कुन्ती, द्रोपदी, सुभद्रा, सत्यभामा, विहुला आदि नारियों के चरित्र में जो ओजस्विता और कर्मनिष्ठा का सम्मिश्रण देखने में आता है, वह उस काल में नारी का स्थान निरूपित करने में हमारा मुख्य आधार बन गया है। लेकिन यह कतई नहीं कहा जा सकता कि उस काल की प्रायः सभी नारियां वैसी ही तेजस्विनी एवं कर्त्तव्यपरायण थी क्योंकि मध्यम वर्ग और निम्न वर्ग की नारियों के संबंध में हमें कोई उदाहरण नहीं मिलते। महाभारत में जिन नारी चरित्रों से हमारा साक्षात परिचय होता है उनका परिचय मात्र नारीत्व तक सीमित नहीं अपितु परिपूर्ण मानवता के रूप में वर्णित है। उनकी पूर्णता और महिमा का महाकाव्यों में दिव्य वर्णन हुआ है।

निष्कर्षत यह कहा जा सकता है कि महाकाव्यों में नारी की स्थिति में निरंतर ह्रास या गिरावट दिखाई देती है। रामायण और महाभारत में जिस नारी का वर्णन हमें मिलता है वह प्रायः अभिजात वर्ग या उच्च वर्ग का प्रतिनिधित्व करती है अतः उसे समाज की सामान्य नारी का प्रतिनिधि नहीं कहा जा सकता और इसलिए हम ये जानने में कठिनाई महसूस कते है कि महाकाव्यकालीन महिला, श्रमिक, सेविकाओं तथा ग्रामीण कृषक महिलाओं की स्थिति कैसी थी। महाकाव्यों में नारी का चित्रण एक संतुलित दृष्टिकोण के साथ नहीं किया गया है, कहीं अतिशय प्रशंसा और कहीं अत्यधिक निंदा की गयी है इसलिए हमारे लिए एक संतुलित निष्कर्ष निकालना कठिन हो जाता है। फिर भी यही कहा जा सकता है कि समाज पितृसत्तात्मक था महिलाओं का स्थान दूसरे दर्जे की नागरिक के समान ही था।

सदंर्भ सूची

शास्त्री पी.पी. महाभारत 1. 74. 40
महाभारत अनुशासन पर्व 19. 93
महाभारत 1. 229. 14
ग्रिफिथ आर. टी. एच. रामायण, उत्तरकाण्ड
महाभारत आदिपर्व 159. 11
उपरोक्त 5. 97. 15. 16
वही 3. 53. 5. 8
वही 13. 45. 11
वही 1. 157
वही 11. 1 . 3
वही वनपर्व 292. 23
रामायण 2. 27. 10
उपरोक्त 2. 20. 75. किष्किन्धा काण्ड 16. 12
महाभारत 110. 9
वही 2. 118. 34
वही 2. 39. 29
वही शांतिपर्व, 144. 66
वही 13. 24. 9
रामायण 77. 26
वही 85. 24
वही 87. 22
महाभारत 1. 84. 27
वही 1. 81. 26
वही 1. 172. 20
वही 14. 80. 14–15
रामायण 77. 29, 6
रामायण अयोध्याकाण्ड 24, 26. 27
महाभारत आदिपर्व 16. 12
महाभारत अनुशासन र्पव 37. 4
रामायण 3. 45. 5. 7
महा.आदिपर्व 16. 12
वही शांति पर्व 148. 2
वही आदिपर्व 122. 10. 20
वही 1. 1118. 5. 9
वही उद्योग 151. 58
महाभारत अनुशासन पर्व 1916. 27. 12–29

वही	38. 16
शास्त्री पी.पी.एच. पूर्वोधृत	33. 321

संदर्भ ग्रंथ–सूची

(1) रामायण– वाल्मीकी सं. रघुवीर, लौहार 1938, गीता प्रेस गोरखपुर, 1940
(2) रामायण– आर. टी. एच. ग्रिफिथ, रामायण, उत्तरकाण्ड : गीता प्रेस, गोरखपुर 1895
(3) रामायण– पी. पी. शास्त्री, अनुशासनपर्वः मद्रास 1931, 3,5,201
(4) महाभारत– नीलकण्ड भाष्य सहित सं. किजवाडेकर पूना 1929–33